ऋषि विश्वामित्र विद्या फाउंडेशन

प्रस्तुतकर्ता: आचार्य कपिल

अथर्ववेद (१.२.२) मन्त्र विश्लेषण एवं सायण भाष्य

१. मन्त्र एवं पदपाठ

ज्याके परि णो नमाश्मानं तन्वं कृधि ।
वीडुर्वरीयोऽरातीरप द्वेषांस्या कृधि ॥२॥

पदपाठ: ज्याके । परि । नः । नम । अश्मानम् । तन्वम् । कृधि ।
वीडुः । वरीयः । अरातीः । अप । द्वेषांसि । आ । कृधि ॥२॥

२. शब्दार्थ एवं अष्टाध्यायी व्याकरणिक टिप्पणी

- **ज्याके (हे धनुष की डोरी):** उपद्रव का कारण होने से इसे कुत्सित माना गया है। अतः 'कुत्सिते' (पा. ५.३.७४) सूत्र से 'क' प्रत्यय लगा है। 'आमन्त्रितस्य च' (पा. ६.१.१९८) से यह आद्युदात्त है।
- **परि नम (हमसे दूर मुड़ जा):** हमारे ऊपर प्रहार न करके अन्यत्र चली जा।
- **तन्वं (शरीर को):** 'तन्वादीनां छन्दसि बहुलम्' (पा.वा. ६.४.८६) से यण् सन्धि हुई है।
- **कृधि (करो/बनाओ):** 'डुकृञ् करणे' धातु से लोट् लकार। 'बहुलं छन्दसि' (पा. २.४.७३) से विकरण का लुक् और 'श्रुशृणुपृकृवृभ्यश्छन्दसि' (पा. ६.४.१०२) से 'धि' आदेश हुआ है।
- **वीडुः (सेना का स्तम्भक):** यास्क मुनि के निरुक्त (५.१६) के अनुसार, जो सेना को सुदृढ़ करता है (यहाँ इन्द्र)।
- **वरीयः (अत्यन्त दूर):** 'उरु' (विस्तृत) शब्द से ईयसुन् प्रत्यय। 'प्रियस्थिर...' (पा. ६.४.१५७) सूत्र से 'उरु' के स्थान पर 'वर' आदेश हुआ है। यह क्रियाविशेषण होने से नपुंसकलिङ्ग है।
- **अरातीः (शत्रुओं को):** 'रा दाने' धातु से 'क्तिच्क्तौ च संज्ञायाम्' (पा. ३.३.१७४) से क्तिच् प्रत्यय। 'तस्माच्छसो नः पुंसि' (पा. ६.१.१०३) से प्राप्त 'न' आदेश का अभाव छान्दस (वेदकालीन) प्रयोग है।

३. सायण भाष्य का हिन्दी अनुवाद एवं मीमांसा प्रमाण

> **सरल अनुवाद:** हे कुत्सित प्रत्यञ्चा (धनुष की डोरी)! तुम हमें छोड़कर मुड़ जाओ (अर्थात् हम पर बाण न चलाओ)। हे इन्द्र! हमारे शरीर को पत्थर के समान अभेद्य बना दो। हे सेना को सुदृढ़ करने वाले इन्द्र! हमारे शत्रुओं और उनके द्वारा किए गए अप्रिय कार्यों को हमसे बहुत दूर कर दो (नष्ट कर दो)।

सायण भाष्य का मीमांसा प्रमाण (लक्षणा वृत्ति):
आचार्य सायण यहाँ एक महत्त्वपूर्ण शंका उठाते हैं कि एक हाड़-मांस का शरीर साक्षात् "पत्थर" (अश्मानं) कैसे हो सकता है? दोनों में अत्यन्त विरोध है।

इसे सिद्ध करने के लिए सायण **"यजमानः प्रस्तरः"** (ऐतरेय ब्राह्मण २.३) के मीमांसा न्याय का उद्धरण देते हैं। जिस प्रकार यज्ञ में कुशा के बंडल (प्रस्तर) को यजमान कहा जाता है, तो इसका अर्थ यह नहीं कि यजमान वास्तव में घास बन गया है, बल्कि इसका अर्थ है कि प्रस्तर भी यजमान के समान ही यज्ञ का एक मुख्य 'साधक' या गुण धारण करता है (जैसे- 'सिंहो देवदत्तः')। उसी प्रकार, यहाँ शरीर को पत्थर कहने का अर्थ है कि शरीर में पत्थर के 'गुण' (दृढ़ता और शस्त्राभेद्यता) आ जाएँ, जिससे शत्रुओं के बाण शरीर को विदीर्ण न कर सकें।

४. मन्त्र का विनियोग (उपयोग)

यह मन्त्र संग्राम (युद्ध) से सम्बन्धित है। इसका मुख्य विनियोग जयकर्म (विजय प्राप्ति) और शत्रुओं के बाणों से आत्मरक्षा के लिए इन्द्र देवता की स्तुति में किया जाता है।